Swami Vivekananda Advanced Journal for Research and Studies
Online Copy of Document Available on: www.svajrs.com

ISSN:2584-105X Pg. 63-68

कवि केदारनाथ सिंह की कविताओं में लोक के सार्वकालिक बिम्ब

नवनीत
पता- नवनीत पुत्र श्री जसवंत सिंह बिष्ट,
अगस्त्यमुनि,प्राथमिक विद्यालय के निकट, भावना ज्वैलर्स अगस्त्यमुनी पिन-246421,
जिला-रुद्रप्रयाग, राज्य- उत्तराखण्ड

Accepted: 03/09/2025
Published: 09/09/2025 *DOI: http://doi.org/10.5281/zenodo.17087309*

शोध सारांश

केदारनाथ सिंह एक बिम्बवादी एवं शहर-गांव के बीच बसे हुए कवि हुए हैं। उन्होंने लोकजीवन को गांवों और कस्बों में बहुत निकटता से देखा है। अपने बाल्यकाल और जीवन का एक समय उन्होंने गांव-कस्बे में भी जिया। इसीलिए वे अपनी कविताओं के माध्यम से अपने गांव के लोकोन्मुखी प्रवृत्तियों का जिक्र कर पाए हैं। लोक के अर्थपूर्ण बिम्बों के साथ कवि ने लोकजीवन की सांस्कृतिक भूमि को भी छुआ है।

पुरातन विश्वासों, मान्यताओं, संस्कारों के इतर वे लोक के उस चहरे से पाठक को अवगत कराते हैं जो समय की हर दहलीज पर नया ही प्रतीत होता है। इसी तरह वे लोक समाज के विभिन्न प्राकृतिक तथा मानवीय क्रिया-व्यापारों एवं उनके पारस्परिक सम्बन्धों को अपनी कविताओं के माध्यम से नये बिम्बों में उतारते हैं।

लोक संसार में प्रकृति का विशेष स्थान होता है। जंगल, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, मिट्टी-पानी, नदी, खेत- खलिहान आदि प्राकृतिक जगत का महत्व और उनकी आधुनिक समाज में स्थिति का अंकन वे अपनी कविताओं में पूरी सामाजिक सरोकारिता के साथ करते हैं।

बीज शब्द-: *बिम्बधर्मी, अनुभूति, लोकोन्मुखी, देहात, आस्था, जटिलता, लोकसंसार, मानवेत्तर।*

केदारनाथ सिंह हिंदी साहित्य के प्रयोगवादी और नई कविता आंदोलन से जुड़े कवि रहे। इनकी कविताएँ शहर और गांव की सीमाओं को स्पर्श करती हुई समय, समाज और भौगोलिक सभी स्थियों को पार करके आधुनिक दौर के समस्त लोक समाज को चित्रित करती हैं।

केदारनाथ सिंह की कविताएं मुख्यतः बिम्बों को लेकर आगे बढ़ती हैं। उनके काव्य सृजन में उनकी अधिकांश कविताएँ पाठक या श्रोता के लिए एक विशेष ध्वन्यात्मक, दृश्य, घ्रांण, आदि एंद्रीय बिम्ब बनाकर भाषा एवं विचारों को तीव्र अनुभूति के साथ अभिव्यक्ति देती हैं। खास तौर पर बिम्बों के लोकोन्मुखी तेवर को लेकर बिम्ब की प्रवृत्ति को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं-

"एंद्रीयता बिम्ब का प्रथम गुण है। हम ना हवा का निर्माण करते हैं, ना फूल का, न अन्न का और न धरती का। हम केवल उस बिम्ब का निर्माण करते हैं जो हमें इन सभी वस्तुओं के संबंध में प्राप्त होता है।××× जिस कवि का जीवन और जगत के वृहत्तर यथार्थ से जितना गहरा रागात्मक संबंध होगा वह उतने ही सफल बिम्बों का निर्माण कर सकेगा। ××× बिम्ब वास्तविकता के विभिन्न स्तरों तक पहुंचने का एक नितांत व्यक्तिगत एवं आत्मपरक मार्ग है।"

प्रयोगवादी कविताओं में जहां वे शहरी समाज के यथार्थ को दिखाते हैं वहीं पर वे सहसा लोक की भीनी गंध के साथ गांव-देहात के अंचल तक हो आते हैं। इस लोक जगत के बिम्बों को वे समय की सीमा से आगे ला कर समकालीन स्थियों में उसके स्मरण की महत्ता को स्पष्ट करते हैं उसे शहर के जीवन में उसकी आवश्यक्ता के साथ जोड़ने का प्रयत्न करते हैं-

"आज की शाम
जो बाजार जा रहे हैं
उनसे मेरा अनुरोध है
XXX
हम अपने थैले और डोलचियाँ
रख दें एक तरफ
और सीधे धान की मंझरियों तक चलें।"[2]

कविता के संदर्भ में डॉ. शेरपाल सिंह लिखते हैं- "उपरोक्त पंक्तियों में सामाजिक यथार्थ की एक सच्चाई उभर कर आई है । वह है कि मण्डियों में धान पैदा नहीं होता। यहां समाज को पद प्रदर्शित करते हुए कवि कहता है कि सच्चाई को पहचानो उसकी ही आवश्यकता आज समाज को है। मण्डी रूपी वह बाजार तो दिखावा है, वास्तविकता तो यह है कि खेतों में धान उपजता है वहीं हमारी जड़े हैं उन्हीं को पहचानने की आवश्यकता है।"[3]

इस प्रकार कविता में कवि ने धान की मंझरियों के बिम्ब से बाजार के अस्तित्व को बहुत गौंण बताने का प्रयत्न किया है। यह बिम्ब लोक समाज में खेतों और खलिहानों के ग्रामीण कृषी की परंपरागत व्यवस्था को रेखांकित करता है। लोक किसी भी समाज में वह क्षेत्र या घटनास्थल हो सकता है जहां कि आज भी पारंपरिक क्रिया-व्यापार, संस्कृत जीवनबोध, स्थिर मानव-प्रकृति के कार्य-व्यवहार, एवं रीती नीतियों के साथ मान्यताओं-विश्वासों का अस्तित्व बना हुआ है।

लेखक कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार- "आधुनिक सभ्यता से दूर अपने प्राकृतिक परिवेश में पले अशिक्षित एवं असंस्कृत जनता को लोक कहते हैं"[4]

वहीं श्याम परमार लोक की व्यापकता को अंकित करते हुए लिखते हैं-"लोक साधारण जन समाज है जिसमें भूभाग में फैले हुए समस्त प्रकार के मानव सम्मिलित हैं। यह शब्द वर्ग भेद रहित, व्यापक एवं प्राचीन परंपराओं की शेष राशि सहित अर्वाचीन सभ्यता संस्कृति के कल्याणमय विकास का द्योतक है। भारतीय समाज में नागरिक एवं ग्रामीण दो भिन्न संस्कृतियों का प्रायः उल्लेख किया जाता है किंतु लोक दोनों संस्कृतियों में विद्यमान है।"[5]

कवि लोक के सांस्कृतिक बिम्बों का भी प्रयोग करते हैं। उन्होंने अपने जीवन में आधुनिक सभ्यता को जिया है। वह जितना परिवर्तन और नूतन विकास के हिमायती लगते हैं उतना ही वे लोक संस्कृति के जीवन मूल्यों को भी जरूरी समझते हैं । परंतु वे लोक में बसे जीवन के उन रूढ़ और अमानवीय रीति-नियमों, विश्वासों एवं परंपराओं को भी समय एवं समाज की उन्नति के सापेक्ष बदलाव के पक्षधर हैं। परिवार के सौहार्दपूर्ण संबंधों, पारस्परिक सहयोग एवं बंधुत्व, जीवन के प्रति आस्था, संतुलित नैतिकताओं के प्रति विश्वास और प्रकृति के प्रति उदार भाव उन्हें अपने ग्रामीण लोक अंचल से ही प्राप्त हुए हैं।

इस संबंध में डॉ. जगजीवन शर्मा लिखते हैं-

"लोकजीवन एवं संस्कृति से कवि केदारनाथ सिंह का गहरा लगाव रहा है तथा ग्रामांचल की प्रकृति से आत्मिक संबंध। ग्रामीण संस्कृति तथा प्रकृति से इसी लगाव के कारण ही उनकी कविता में बार-बार जमीन, बारिश, गांव के पशु और गांव की वनस्पतियां काव्य विषय बनकर आए हैं।××× उनके व्यक्तित्व की विशेषता है कि वे अपनी संस्कृति व अपने ग्रामीण समाज की परंपराओं को कभी नहीं भूलते।"[6]

कवि इस ग्रामीण अंचल में होने वाले धार्मिक तथा ईश्वरीय अनुष्ठानों के प्रति अपने विश्वास की कम ही सम्भावना रखते हुए भी अपने कहीं अंदर एक आस्था सी महसूस करते हैं। वे जीवन की मशीनी जटिलता के इस युग में एक स्थल पर इस तरह के बिम्ब कविता में उकेरते हैं कि मनुष्य को अनुभूति हो कि एक ऐसा संसार भी है जो जीवन में रहस्य से भरा है। जहां मनुष्य किसी अज्ञात सत्ता के प्रति पूर्ण रूप से विश्वास व्यक्त करता हुआ आग के ऊपर चलने लगता है। उस व्यक्ति में एक दैवीय शक्ति प्रकट होने लगती है। आग और मनुष्य के प्राचीन चिरंतन संबंधों के साथ कवि लिखते हैं-

"यह उन दिनों की बात है
जब लोग आग पर चलने की घटनाओं पर
विश्वास करते थे,
वह एक पूजा की तरह होता था
XXX

आदमी ने कुछ सोचा
फिर आव देखा न ताव
बस पहले ही अंगारे पर
रख दिया पाँव
XXX
आग ने कितनी देर बर्दाश्त किया आदमी को
आदमी ने कितनी देर सामना किया आग का
यह एक सुंदर गाथा है।" [7]

इस प्रकार अंगारों में जल रही आग का सामना कर रहे व्यक्ति के प्रति कवि की अंगारों की तरह आस्था रहती है जो समय के साथ बुझ गई पर ऐसा लगता है कि उसकी आँच कभी गई नहीं-

"पर इतने बरसों तक
अविश्वास करते-करते
मेरा मन अपने से ऊब चुका है पूरी तरह"[8]

कवि ने लोक जीवन के मूल्यों एवं प्रकृति के प्रति गहरी आस्था को भी अपनी कविताओं के माध्यम से उजागर किया है। वे गांव में जी रहे लोगों की जीवन के प्रति कृतज्ञता, भोजन के महत्व,पेड़-पौधे तथा पशु- पक्षियों के इस लोक संसार में उपयोगिता को भी उजागर करते हैं -

"हरा पत्ता
कभी मत तोड़ना
और अगर तोड़ना तो ऐसे
कि पेड़ को जरा भी न हो पीड़ा।
रात को रोटी जब भी तोड़ना
तो पहले सिर झुकाकर
गेहूँ के पौधे को याद कर लेना
XXX
अगर कभी लाल चींटियाँ
दिखाई पड़ें
तो समझना
आँधी आने वाली है।"[9]

इस कविता के संबंध में डॉ. जगजीवन शर्मा लिखते हैं- "कुछ सूत्र जो एक किसान बाप ने बेटे को दिए' नामक कविता में ग्रामीण मान्यताओं में विश्वास तो झलकते हैं लेकिन साथ ही पिता अपने पुत्र को परंपरागत रूढ़ियों से हटकर ऐसे सूत्र देता है जिसमें नवीनता और जागरूकता के प्रति आग्रह है।"[10]

लोक जीवन के समाज से संदर्भित बिम्बों में कवि कस्बे, ग्रामीण, देहात, एवं वन्य क्षेत्रों में रह रहे लोगों के जीवन को समझने एवं अनुभव करने में सटीक बिम्बों का प्रयोग करते हैं। वे एक देहाती कार्यकर्ता को एक ग्रामीण परंपरागत अंचल में बसे उस व्यक्ति के रूप में बिंबित करते हैं जो आपने हरकतों, वेशभूषा, भाषा- व्यवहार से शहरी सभ्यता की तुलना में बिल्कुल अलग है। कवि लिखते हैं-

"उसके सवालों और उसके तम्बाकू पर
तिलमिला उठता हूं मैं
मैं बेहद परेशान हो जाता हूं
उसकी गलत-सलत भाषा
उसके शब्दों से गिरती धूल
और उसके उन बालों पर" [11]

स्पष्टतः उस देहाती व्यक्ति की भाषा लोक की सहज, नैसर्गिक और स्थानीय बोली है। उसके हाव-भाव और उसके व्यवहार वार्तालाप के रूप में असभ्य माने जाने वाले शब्दों से युक्त है। उसके शब्दों की धूल उसके लोक की आंचलिकता को ली हुई है। क्योंकि यह लोक-देहात का अपना स्वभाविक रूप है।

कवि ने लोक समाज की वस्तुओं और स्थितियों को दिखाकर लोक जीवन में रह रहे लोगों के विकट समय को भी कई भी बिम्बों के माध्यम से प्रकट किया है। नदी के तटों पर बाढ़ आ जाए तो वह लोग घबराते नहीं हैं। अपने गांव समाज के साथ पुनः गांव को बसाते हैं। इस प्रकार जीवन और समाज के प्रति गहरी आस्था कवि इन ग्रामीण जनों मे देखते हैं। इसी संदर्भ में वे लिखते भी हैं-

"पानी से घिरे हुए लोग
प्रार्थना नही करते
XXX
फिर वे गाड़ देते हैं खम्बे
तान देते हैं, बोरे
उलझा देते हैं, मुंज की रस्सियाँ और टाट
XXX
वे ले आते हैं आम की गुठलियाँ
खाली टिन
भूने हुए चने
वे ले आते हैं, चिलम और आग
फिर बह जाते हैं उनके मवेशी
उनकी पूजा की घंटी बह जाती है"[12]

इस संबंध में डॉ. जगजीवन शर्मा लिखते भी हैं- "पानी से घिरे हुए लोग' कविता में भी आस्था और परिवर्तन के स्वर हैं। "[13]

ग्रामीण अंचल में लोगों का जंगलों से गहरा संबंध होता है। लोग प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्षतः जंगल के पेड़-पौधों पर कहीं ना कहीं निर्भर होते हैं। इसी संदर्भ में कवि ने एक बढ़ई को कविता में स्थान देकर उसके प्राकृतिक संबंधों एवं उसके अपने जीवन के बीच की पारस्परिक प्रतिकूल स्थितियों को बिम्बित किया है-

"वह लकड़ी चीर रहा था
कई रातों तक
जंगल की नमी में रहने के बाद उसने फैसला किया था
XXX
उसकी आरी कई बार लकड़ी की नींद
और जड़ों में भटक जाती थी
कई बार एक चिढ़िया के खोते से
टकरा जाती थी उसकी आरी
XXX
वह चीर रहा था
और दुनिया दोनों तरफ

चीरे हुए पटरों की तरह गिरती जा रही थी"[14]

कविता के संबंध में डॉ. जगजीवन शर्मा लिखते हैं- "केदारनाथ सिंह की कविता में गाँव का वातावरण ही ऐसा है जिसमें श्रम व संघर्ष कूट-कूट अर भरा पड़ा है।"[15]

कवि ने इस ग्रामीण लोक को जिया है। वह अपने गांव 'चकिया' में काफी समय तक रहे। उन्होंने गांव का जीवन और वहां की हर एक स्थिति को अनुभव किया है। लंबे समय तक शहर में रहकर उन्होंने समझा है कि एक नैसर्गिक एवं निश्चित जीवन भी संसार में होता है जो सभी दैनिक जीवन की दुविधाओं, कृत्रिमताओं, असहाय स्थितियों, जटिलताओं एवं उदासी से बहुत दूर है। वे ऐसे समय में उस गाडरिये को अपनी स्मृति में बिंबित करते हैं जो कि इन सभी आधुनिक स्थितियों से परे है। अपनी भेड़ों के साथ इस दुनिया में खुश रहा करता था। भले वह दुखी और निराश था किंतु उसे अपने जीवन संघर्ष में दृढ़ता और जीवन शक्ति में अपार श्रद्धा थी। क्योंकि वह चहरा बूढ़ा हो कर भी जीवित था -

"यहाँ तक आते-आते
मैं बहुत कुछ भूल चुका हूँ
बहुत कुछ जिसे याद रखना
बहुत जरूरी था
XXX
मुझे क्यों याद है?
एक बूढ़े उदास गड़रिये का चेहरा
जिसे मैंने एक दिन
नदी में देखा था
जहाँ उसकी भेड़ें पानी पी रही थी
मैंने देखा - वहाँ उसकी झुर्रियों में
अब भी जगह थी
जहाँ एक चिड़िया
अपना घोसला बना सकती थी"[16]

इस प्रकार एक बूढ़े उदास गढ़रिये का झुर्रियों वाला चेहरा और झुर्रियों में एक पक्षी के घोंसले के बनने की संभावना को व्यक्त करते हुए कवि ने एक लोक-देहात में रहने वाले आम बुजुर्ग के जीवन की सार्थकता को बिंबित करने की कोशिश की है। लोक के प्राकृतिक बिम्बों पर विचार करें तो कवि ने प्राकृतिक घटनाओं, वस्तुओं, मानव-प्रकृति अंतः संबंधों और स्थितियों को बड़े सुंदर तरीके से बिंबों के माध्यम से अपनी कविता में भरा है। केदारनाथ सिंह बिंबधर्मी कवि हैं।

अकाल में दूब' कविता में जब कवि को टूटे हुए कांच के बीच जमीन पर एक उगी हुई दूब की हरी पत्ती दिखती है तो ये बात कवि के पिता को ज्ञात होने पर पिता का कहना-'अभी बहुत कुछ है', कवि का ग्रामीण समाज के बीच जीवन और प्रकृति के प्रति गहरी आस्था के रूप को दिखाना है-

"भयानक सूखा है
पक्षी छोड़कर चले गये हैं
पेड़ों को छोड़कर चले गये हैं चींटे
चीटियाँ
देहरी और चौखट
पता नहीं कहीं-किधर चले गए हैं
XXX
शीशे के बिखरे हुए टुकड़ों के बीच
एक हरी पत्ती
दूब है
हाँ-हाँ दूब है-
पहचानता हूँ मैं
लौटकर यह खबर
देता हूँ पिता को
अंधेरे में भी
दमक उठता है उनका चेहरा
'है-अभी बहुत कुछ है
अगर बची है दूब...' "[17]

इसी तरह पानी को पृथ्वी का प्राचीनतम नागरिक मानते हुए कवि ने पानी की व्यथा और उसका प्रकृति के लिए महात्म्य को स्पष्ट किया है-

"प्रभू
मैं-पानी-पृथ्वी का
प्राचीनतम नागरिक
XXX
कल एक वो आई
और बैठ गई मेरे बाजू में
पहले चौंक कर उसने इधर-उधर देखा
फिर अपनी लम्बी चोंच गड़ा दी मेरे सीने में
XXX
दिन के कोई तीसरे पहर
एक जानवर आया हकासा-पियासा
और मुझे पीने लगा चभर-चभर
XXX
यह एक पशु के आन्नद की आवाज थी"[18]

कवि नदी के अतीत और उसके नाम के अर्थों को स्पष्ट करते हैं। वे बिंबात्मक माध्यम से इंगित करते हैं कि एक नदी चाहे उसका नाम हो अथवा न हो परंतु वो शांति से अपने मार्ग में चलती रहती है। परंतु मानव-मानवेत्तर समाज उसके बिना नही है। ऐसा प्रतीत होता है कि नदी और सम्पूर्ण जीवन की मुक्ति परस्पर एक-दूसरे के साथ अमिट संबंधों में ही मौजूद है। कवि उस 'बिना नाम की नदी' जो उनके गाँव के बीच से बहती है के विविध अर्थों को मनुष्य और मनुष्येत्तर जगत के संदर्भ में प्रकट करते हैं-

"मेरे गाँव को चीरती हुई
पहले आदमी से भी बहुत पहले से
चुपचाप बह रही है, यह पतली-सी नदी
जिसका कोई नाम नहीं
XXX
कहीं कोई आता है
लोग उठाते हैं
और नदी जहाँ सबसे ज्यादा चुप और अकेली है
उसी के आजू-बाजू फूँक आते हैं।
XXX
सूरज निकलने के काफी देर बाद

आती हैं भैंसें
नदी में नहाने के लिए।" [19]

इसी तरह 'नदियाँ' कविता में कवि मुक्ति की इसी तस्वीर को और स्पष्ट करते हैं। वे जीवन-मृत्यु के मध्य कहीं न कहीं नदी को जोड़ते हुए प्रकृति और मनुष्य के पारस्परिक अटूट संबंधों पर विचार करते हैं। तात्विक स्तर पर जल और जीवन को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं-

"उसकी नशों में बहता है
पहाड़ों का खून
जिसमें थोड़ा-सा खून
हमारा भी शामिल है
और गरम-गरम दूध
टपकता हुआ भूरे दरख्तों की छाल में
XXX
अन्त और आरम्भ
अपने विरोध की सारी उष्मा के साथ
जिस जगह मिलते हैं
कहीं वहीं से निकलती हैं
सारी की सारी नदियाँ।"[20]

कवि पेड़ों की मनुष्य के साथ गहरी अनुभूतियों और जीवन के सार्वकालिक संबंधों की ओर संकेत करते हैं। वे स्पष्ट करते हैं कि किस प्रकार मनुष्य पेड़ से कभी भी पीछा नही छुड़ा सकता। मानव पेड़ों के कटाव और हरे रंग की महत्ता की सोच को दरकिनारा कर अपनी संदेह करने वाली जीवन पद्धति से आजाद नही होगा तो उसे जीवन के सहज और वास्तविक अर्थ नही पता चलेंगे। इनके बिना हर प्रकार के कला, साहित्य और सौंदर्य के कार्य-व्यापार अपूर्ण ही रह जाएंगे-

"एक हरी-भरी डाल के नीचे गुजरते हुए
तुम्हें पता भी नही चलेगा
कि हरा एक ऐसा रंग है
जो सीधे आदमी के शक पर चोट करता है
XXX
इस कोरे कागज पर तुम जो कुछ लिख रहे हो
उसमें पेड़ों की यातना भरी चुप्पी भी शामिल है।"[21]

निष्कर्ष-

कवि ने अपनी कविताओं में ग्रामीण और देहाती जीवन के वह बिम्ब उकेरे हैं जिनमें आम समाज लोक की साधारण जीवन शैली में अपने मूल मानव के सहज रूप को संजोए हुए है। इसका एक पहलू परिवर्तन की मांग करता है तो दूसरा मनुष्य में मानवीय प्रेम के विविध शाश्वत रूपों को बनाए रखने हेतु प्रेरित करता है। कवि ने इसी दूसरे रूप को लोक समाज और उसकी प्रकृति के निकट पाया है। इस लोक का मनुष्य अपने चारों तरफ के चराचर जीव-जगत से कुछ ना कुछ संबंध रखता है। उससे संघर्ष करता है। उससे सीखता है। वह प्रकृति का सम्मान करता है। उसके पवित्र नियमों के प्रति विश्वास रखता है। कवि इस प्रकृति के निकट रहने वाले समाज की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में आज की आधुनिक सभ्यता का अवलोकन करता है। वह पुरातन जड़ परंपरा, मान्यता एवं खोखले विचारों को स्वीकार न करते हुए भी इस लोक संस्कृति की मानव- प्रकृति सहचर्य संबंधी पुरातन और मौलिक संवेदनाओं, संस्कारों एवं विचारों को महत्वपूर्ण मानता है। इस प्रकार कवि ने अपने लोक से लिए गए बिंबो में एक जीवंतता ढूंढते हुए सभी समय में उनकी प्रासंगिकता को स्पष्ट किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूचि-

1-डॉ. केदारनाथ सिंह, आधुनिक हिंदी कविता में बिम्ब विधान, भारतीय ज्ञानपीठ, नेताजी सुभाष मार्ग-दिल्ली, सं.-प्रथम, पृ.-21

2-संपादक-श्रीमती सुधा, लेखक-केदारनाथ सिंह, समकालीन हिंदी कविता, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, अंसारी रोड-दरियागंज, सं.-2015, पृ.-232

3-डॉ. शेरपाल सिंह, केदारनाथ सिंह का काव्य लोक, विद्या प्रकाशन, गुजैनी-कानपुर, सं.-2005, पृ.-105

4-कृष्णदेव उपाध्याय, लोक साहित्य की भूमिका, साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड, के. पी. कक्कड़ रोड- इलाहाबाद, सं.-1995, पृ.-11

5-श्याम परमार, भारतीय लोक साहित्य, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं.-1954, पृ.-10

6-डॉ. जगजीवन शर्मा, समकालीन कविता में ग्रामीण बोध, शुभदा प्रकाशन, सुभाष पार्क शाहदरा- दिल्ली, सं.-2010, पृ.-68

7-केदारनाथ सिंह, प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नेताजी सुभाष मार्ग दरियागंज- दिल्ली, सं.-2019,प.-126

8- केदारनाथ सिंह, प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नेताजी सुभाष मार्ग दरियागंज - दिल्ली, सं.-2019, पृ.-127

9-संपादक-श्रीमती सुधा, लेखक-केदारनाथ सिंह, समकालीन हिंदी कविता, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, अंसारी रोड-दरियागंज, सं.-2015, पृ.-235

10-डॉ. जगजीवन शर्मा, समकालीन कविता में ग्रामीण बोध, शुभदा प्रकाशन, सुभाष पार्क शाहदरा- दिल्ली, सं.,-2010, पृ.-61

11-केदारनाथ सिंह, यहां से देखो, राधा कृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, जगतपुरी-दिल्ली, सं.-2019, पृ.-11

12-केदारनाथ सिंह, यहां से देखो, राधा कृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, जगतपुरी-दिल्ली, सं.-2019, पृ.-18

13-डॉ. जगजीवन शर्मा, समकालीन कविता में ग्रामीण बोध, शुभदा प्रकाशन, सुभाष पार्क शाहदरा- दिल्ली बोध, शुभदा प्रकाशन, सुभाष पार्क शाहदरा- दिल्ली, सं.-2010, पृ.-58

14-केदारनाथ सिंह, प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नेताजी सुभाष मार्ग दरियागंज- दिल्ली, सं.-2019, पृ.-32-33

15-डॉ. जगजीवन शर्मा, समकालीन कविता में ग्रामीण बोध, शुभदा प्रकाशन, सुभाष पार्क शाहदरा- दिल्ली, सं.-2010, पृ.-39

16-केदारनाथ सिंह, प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नेताजी सुभाष मार्ग दरियागंज- दिल्ली, सं.-2019, पृ.-116-117

17-केदारनाथ सिंह, प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नेताजी सुभाष मार्ग दरियागंज- दिल्ली, सं.-2019, पृ.-41

18-केदारनाथ सिंह, प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नेताजी सुभाष मार्ग दरियागंज - दिल्ली, सं.-2019, पृ.-32-33

19-केदारनाथ सिंह, ज़मीन पक रही है, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नेताजी सुभाष मार्ग दरियागंज-नई दिल्ली, सं.-2014, पृ.-15-16

20-केदारनाथ सिंह, प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नेताजी सुभाष मार्ग दरियागंज- दिल्ली, सं.-2019, पृ.-48-50

21-केदारनाथ सिंह, ज़मीन पक रही है, राजकमल प्रकाशन पाटनेतेट लिमिटेट नेताजी सुभाष मार्ग दरियागंज-नई दिल्ली, सं-2014,पृ.-44

Disclaimer/Publisher's Note: The views, findings, conclusions, and opinions expressed in articles published in this journal are exclusively those of the individual author(s) and contributor(s). The publisher and/or editorial team neither endorse nor necessarily share these viewpoints. The publisher and/or editors assume no responsibility or liability for any damage, harm, loss, or injury, whether personal or otherwise, that might occur from the use, interpretation, or reliance upon the information, methods, instructions, or products discussed in the journal's content.

****